REVIEW OF RESEARCH
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF) UGC APPROVED JOURNAL NO. 48514 ISSN: 2249-894X
VOLUME - 7 | ISSUE - 10 | JULY - 2018

बाल साहित्य और वर्तमान की हलचल

भागिरथ चौधरी
हिन्दी विभाग,एम0एम0टी0एम0 कॉलेज,दरभंगा

सारांशः

साहित्य की दुनिया में बच्चों की किताबों का जिक्र बहुत ज्यादा नहीं होता। बाल साहित्य की अवधारणा भी समस्यामूलक है। जहाँ कुछ बाल साहित्यकार नैतिकता और संस्कृति की शिक्षा को बाल साहित्य का परम लक्ष्य मानते हैं वही इधर बाल साहित्य के क्षत्रमें आए नए लोगों का मानना है कि नैतिक शिक्षा से जोड़ देना बाल साहित्य का गंभीर अवमूल्यन है। जाहिर है दोनों अतिरेकी विचार हैं। इस प्रसंग में याद आता है कि क्या प्रेम का कोई लक्ष्य होता है? नामवर सिंह ने अपनी किताब 'दूसरी परंपरा की खोज' में लिखा है कि प्रेम का कोई उद्देश्य नहीं होता वह स्वयं एक पुरूषार्थ है। बच्चों के लिए लिखे जाने वाले साहित्य में राष्ट्र प्रेम, संस्कार, माता–पिता की भक्ति, आज्ञा पालन, अनुशासन जैसे गुणों की अनिवार्य खोज करने की जिद इन्हें कम से कम बाल साहित्य तो नहीं रहने देती। बंगाल में सुकुमार राय ने बच्चों के लिए जो नॉनसेंस लिखे वे आज भी बाल साहित्य में भारतीय पक्ष को शानदान बनाने वाले हैं। हिंदी में ऐसा न हो पाने के कारण गहरे और जटिल हैं। यह समूचे हिंदी मनोविज्ञान का मसला है जो एक पराजित आशय से ग्रस्त रहा। आखिर हम सवालों से घबराते क्यों हैं? बच्चों को अनुशासन में बाँधने का मुख्य लक्ष्य क्यायह नहीं कि वे सवाल न करें? अच्छा है कि बाल साहित्य में वह पीढ़ी आ रही है जो सवालों से कतराती नहीं और जिसे यह भ्रम नहीं है कि इस साहित्य को पढ़ाकर हम नौनिहालों को भारतवर्ष को समर्पित करवा देंगे। कहना चाहिए कि ये नए लेखक किसी उद्देश्य की तलाश नहीं करते और फिर भी किताबें वह कह देने में सक्षम दिखाई दे रहा हैं जो कदाचित न कहा जा सका था।

प्रस्तावनाः

यहाँ यह विचार भी आवश्यक है कि बड़े और प्रसिद्ध हिंदी रचनाकार आमतौर पर बच्चों के लिए क्यों नहीं लिखते। हिंदी में यह काम बाल साहित्य के विशेषज्ञों के लिए आरक्षित माना जाता है और परिणामस्वरूप बच्चों को नंदन वन और चंपक वन की कथाओं से आगे कुछ खास नहीं मिल पाता। ऐसा विश्व की बड़ी भाषाओं को तो छोड़िए भारतीय भाषाओं में भी नहीं होता और इसका परिणाम यह है कि हम बच्चों में साहित्य और किताब के प्रति दिलचस्पी जगा पाने में असफल ही रहे हैं। किताब पढ़ना केवल किताब पढ़ना नहीं होता बल्कि पाठक के तौर पर खुद को विचार प्रक्रिया में शामिल करना भी है। इस लिहाज से बच्चों के लिए किताब एक मुश्किल मसला बन जाता है क्योंकि आप बहुत सघन वैचारिक खुराक देंगे तो वह पढ़ेगा ही नहीं और मनोरंजन से भर देंगे तो फिर विचार का क्या होगा? रास्ता बनाया जा सकता है और वह रास्ता है भागीदारी का, यदि सुंदर प्रस्तुति के साथ लेखक पाठ–प्रक्रिया में नन्हें पाठक को शामिल कर सके तो निश्चय ही किताब असरदार होगी।[1] दूसरी बात है कि उपदेश प्रवृत्ति से बाल साहित्य को बचना चाहिए, भला यह कैसी विडंबना है कि जब अभिभावक या बड़े ही उपदेश को पसंद नहीं करते और न उस पर अमल करना जरूरी समझते हैं तब बच्चों से इसकी अपेक्षा कैसे की जा सकती हैं? तीसरी बात बाल साहित्य में भी थोड़े प्रोफेशनलिज्म की है अर्थात् बच्चों को ध्यान में रखकर छपाई और प्रस्तुति हो। घटिया कागज और छपाई पर महानतम साहित्य भी

अग्राह्य लगेगा। इधर आई बच्चों की कुछ नई किताबों से आशा की जा सकती है। कुछ स्वयंसेवी संस्थाओं और निजी प्रयासों से आ रही इन कुछ किताबों को ध्यान से देखा जाना जरूरी है क्योंकि इनका सफल होना बाल साहित्य के लिए सही रास्ता बनाएगा।[2] 'रूम टू रीड' ने पहले भी कई बढ़िया किताबें बच्चों के लिए तैयार की हैं अभी आई किताबों में पहली है–'हाथी और चींटी', प्रमोद पाठक की कहानी और राही कदम के चित्रों से बनी इस किताब में छोटी–सी कहानी हैं। बच्चों में (और बड़ों में भी) यह प्रवृत्ति होती है कि वे अपने में किसी न किसी विशिष्टता की तलाश करते हैं और ऐसी कोई विशिष्टता न मिलने पर अक्सर कुंठित होते हैं। कई बार यह जिद नुकसान करने वाली होती है लेकिन है तो क्या कीजीए? यहाँ प्रमोद मामूली की कथावास्तु के सहारे इस विशिष्टता बोध पर चोट करते हैं और वे अपने भीतर छिपे मामूली गुणों को ही ठीक से पहचानने की दिशा पाठकों को देते हैं। संदेश गहरा है और अर्थ व्यापक। लोक शैली के चि? कहानी को प्रभावी बनाते हैं।[3]

प्रभात उन प्रतिभाशली युवाओं में अग्रणी हैं जो बाल साहित्य के लिए भी समर्पित हैं। प्रभात की कहानी और हर्षवर्धन कदम के चित्रों से बनी किताब 'नाच' भाषा के जादू बताती है। एक शब्द है–'नाच'। अब इससे कितनी और कैसी–कैसी अर्थ छवियाँ लेखक–चित्रकार ने मिलकर तैयार कर दी हैं। गाँव का नाम नाचना, नाच की खबर, मन नाचने लगा, गर्दन नाच रही थी, हाथ नाच रहे थे, आँखें नाच रही थीं और जब बिजली गई–अंधेरा नाचने लगा, हवा नाचने लगी। बड़ी कला यह नहीं है कि कोई कितनी बड़ी बात कहता है, बड़ी कला यह है कि मामूली दिखाई दे रही स्थिति और साधारण लग रही भाषा से भी नई और अलहदा बात कैसे की जा सकती है। राजस्थान के रेगिस्तान का जादू जैसे किताब में आ गया है। किताब पढ़ते हुए याद आता है कि गाँवों के नामों में भी विविधता हो सकती है–दूधखेड़ी, आंवलहेड़ा से लगाकर गंज बासौदा तक। देखिए तो इधर कितने सारे शास्त्री नगर और वसंत कुंज हो गए? 'नाव में गाँव' किताब में भी प्रभात की कहानी है जिसे अतनु राय के चित्रों के साथ पढ़ना है। किताब का बीज मंत्र है– नदी में नाव! नाव में गाँव!! कहानी एक गाँव की रोजमर्रा जिंदगी का चित्र बताती है। नाव में लोगों का चढ़ना–उतरना और जीवन का सहज गति से बढ़ते जाना। यह बहुत सामान्य प्रतीत होती है कि लेकिन देखने की बात यही है कि इस सामान्य में क्या है जो हम कभी देख नहीं पाते। इस सामान्य को देख सकने के लिए दोनों कलाकार (प्रभात और अतनु राय) जो उद्यम कर रहे हैं वह पाठकों को दृष्टि देता है। इसी किताब का जिक्र क्यों किया जाए? तुलसीदास ने जिस सरयू के चित्र खींचे हैं या केदारनाथ अग्रवाल ने जिस केन नदी का उल्लेख बार–बार कविताओं में किया है वे नदियाँ कोई आकाशगंगाएँ नहीं थीं तथापि उनकी साधारणता में असाधारण लगती है तो इसका कारण कवि है–लेखक है। प्रभात और अतनु राय यह काम कर सके हैं। इस किताब का आकार डिमाई या सामान्य नहीं है बल्कि बहुत बड़ा है और शायद यह आकार भी कहता है कि ध्यान से देखो तो मामूली भी खास लगेगा। प्रभात और उनके चित्रकार–डिजाइनर मित्र शिवकुमार गाँधी ने मिलकर एक किताब तैयार की है– भोर! सुबह का आना कैसा होता है। कैसे भारे सारे संसार को जगाती है? ओस कैसे उसकी मदद करती हैं? फूसल उनसे क्या कहती है? हवा उनके काम को कैसे आसान बनाती है? प्रकृति क्या करती है और मनुष्य जीवन से उसके क्या संबंध हैं? यह सब इन छोटी–छोटी बातों में आ गया है।

संदर्भ सूचीः–

1. आजकल, दिसम्बर–1999
2. आजकल, दिसम्बर–2011
3. आजकल, मई –2007